# भारतीय शिक्षा की दुर्दशा

❑ सुन्दर लाल

यद्यपि भारत पर ब्रिटिश शासन इतिहास की कहानी बन चुका है, फिर भी अंग्रेजों और भारतीयों का संबंध पहले किस प्रकार हुआ और किस प्रकार उनका साम्राज्य धीरे-धीरे बढ़ता गया, ये सभी बातें अब भी बहुत ही दिलचस्प हैं ।

श्री सुंदर लाल की यह प्रसिद्ध इतिहास पुस्तक अंग्रेजों के आरंभिक 100 साल पर बहुत ही प्रामाणिक है। प्रत्येक पंक्ति किसी न किसी अकाट्य आधार पर लिखी गई है । पुस्तक के लिखे जाने के दिनों में ही इस संबंध में इतनी खलबली थी कि इसके प्रकाशन के पहले ही इसकी जब्ती का फैसला हो चुका था । जब्त हो जाने पर महात्मा गांधी ने बहुत दिलचस्पी ली थी। महादेव भाई ने पुस्तक को आद्योपांत पढ़ा और गांधीजी को पढ़ कर सुनाया । इसके बाद गांधी जी ने 'यंग इंडिया' में कई संपादकीय लेख लिखे । महात्माजी तो इस पुस्तक की जब्ती पर इतने उत्तेजित थे कि उन्होंने लोगों को यह सलाह दी कि ब्रिटिश सरकार के कानून तोड़ कर सत्याग्रह करने का अवसर आए तो इस पुस्तक के महत्वपूर्ण अंशों को छाप कर खुला वितरण किया जाए और लोग जेल जाएं ।

यहां पुस्तक का एक अध्याय 'भारतीय शिक्षा की दुर्दशा' पुनर्प्रस्तुत किया जा रहा है ।

### अंगरेजों से पहले भारत में शिक्षा की अवस्था

'अंग्रेजों के आने से पहले सार्वजनिक शिक्षा और विद्या प्रचार की दृष्टि से भारत संसार में अग्रतम देशों में गिना जाता था। 19 वीं सदी के शुरू में और उसके कुछ बाद तक भी यूरोप के किसी देश में शिक्षा का प्रचार इतना अधिक न था जितना भारतवर्ष में, और न कहीं भी प्रतिशत आबादी के हिसाब से पढ़े-लिखों की तादाद इतनी अधिक थी जितनी भारत में । उन दिनों यहां जनसामान्य को शिक्षा देने के लिए मुख्यत: चार तरह की संस्थाएं थीं - (1) लाखों ब्राह्मण अध्यापक अपने-अपने घरों पर विद्यार्थियों को रखकर शिक्षा देते थे । (2) सभी मुख्य-मुख्य नगरों में उच्च संस्कृत शिक्षा के लिए 'टोल' या 'विद्यापीठ' कायम थीं । (3) उर्दू और फारसी की शिक्षा के लिए जगह-जगह मकतब और मदरसे थे, जिनमें लाखों हिंदू और मुसलमान विद्यार्थी साथ-साथ शिक्षा पाते थे। (4) इन सबके अतिरिक्त देश के हर छोटे से छोटे गांव में गांव के सब बालकों की शिक्षा के लिए कम से कम एक पाठशाला होती थी । जिस समय तक कि ईस्ट इंडिया कम्पनी ने आकर भारत की हजारों साल पुरानी ग्राम पंचायतों को नष्ट नहीं कर डाला उस समय तक गांव के सब बच्चों की शिक्षा का प्रबंध करना हर ग्राम पंचायत अपना अपना आवश्यक कर्तव्य समझती थी और सदैव उसका पालन करती थी।

इंगलिस्तान की पार्लियामेंट के प्रसिद्ध सदस्य केर हार्डी ने अपनी पुस्तक 'इंडिया' में लिखा है -

''मैक्समूलर ने, सरकारी लेखों के आधार पर और एक मिशनरी रिपोर्ट के आधार पर जो बंगाल पर अंग्रेजों का कब्जा होने से पहले वहां की शिक्षा की अवस्था के संबंध में लिखी गई थी, लिखा है कि उस समय बंगाल में 80,000 देशी पाठशालाएं थीं, यानी सूबे की कुल आबादी के हर चार सौ मनुष्यों के पीछे एक पाठशाला मौजूद थी । इतिहास लेखक लडलो अपने 'ब्रिटिश भारत के इतिहास' में लिखता है कि - हर ऐसे हिन्दू गांव में, जिसका पुराना संगठन अभी तक कायम है, मुझे विश्वास है कि, आम तौर पर सब बच्चे लिखना पढ़ना और हिसाब करना जानते हैं; किन्तु जहां हमने ग्राम पंचायत का नाश कर दिया है, जैसे बंगाल में, वहां ग्राम पंचायत के साथ-साथ गांव की पाठशाला भी लोप हो गई ।''

प्राचीन भारतीय इतिहास के यूरोपियन विद्वानों में मैक्समूलर प्रामाणिक माना जाता है और लडलो भी एक प्रसिद्ध इतिहास लेखक था । जो बात जरमन मैक्समूलर ने बंगाल के बारे में कही है उसी का समर्थन अंगरेज लडलो ने सारे भारत के लिए किया है।

### प्राचीन भारत में शिक्षा का प्रचार

प्राचीन भारत के ग्रामवासियों की शिक्षा के संबंध में सन् 1823 की कम्पनी की एक सरकारी रिपोर्ट में लिखा है -

''शिक्षा की दृष्टि से संसार के किसी भी दूसरे देश में किसानों की हालत इतनी ऊंची नहीं हैं जितनी ब्रिट्रिश भारत के अनेक भागों में ।''

## भारत की शिक्षा प्रणाली

यह दशा तो उस समय शिक्षाके फैलोव की थी । अब रही शिक्षा देने की प्रणाली। इतिहास से पता चलता है कि उन्नीसवीं सदीं के शुरू में डाक्टर एण्ड्रूबेल नामक एक प्रसिद्ध अंगरेज शिक्षा प्रेमी ने इस देश से इंगलिस्तान जाकर वहां पर अपने देश के बालकों को भारत की प्रणाली के अनुसार शिक्षा देना शुरू किया । 3 जून, सन् 1814 को कम्पनी के डाइरेक्टरों ने बंगाल केगवर्नर जनरल के नाम एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा है-

''शिक्षा का जो तरीका बहुत पुराने समय से भारत में वहां के आचार्यो के अधीन जारी है उसकी सबसे बड़ी तारीफ यही है कि रेवरेण्ड डाक्टर बेल के अधीन, जो मद्रास में पादरी रह चुका है, वही तरीका इस देश (इंगलिस्तान) में भी प्रचलित किया गया है ; अब हमारी राष्ट्रीय संस्थाओं में इसी तरीके के अनुसार शिक्षा दी जाती है, क्योंकि हमें विश्वास है कि इससे भाषा का सिखाना बहुत सरल और सीखना बहुत सुगम हो जाता है ।''

''कहा जाता है कि हिन्दुओं की इस अत्यन्त प्राचीन और लाभदायक संस्था को सल्तनतों के उलट फेर कोई हानि नहीं पहुंचा सके ।''

आजकल की पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली में जिस चीज को 'म्यूचुअल ट्यूशन' कहा जाता है वह पश्चिम के देशों ने भारत से ही सीखी है ।

## कम्पनी-शासन में भारतीय शिक्षा का ह्रास

भारत के जिस-जिस प्रांत में कम्पनी का शासन जमता गया उस उस प्रांत से ही यह हजारों साल पुरानी शिक्षा प्रणाली मिटती चली गई । कम्पनी के शासन से पहले भारत में शिक्षा की अवस्था और कम्पनी का पदार्पण होते ही एक सिरे से उस शिक्षा के सर्वनाश दोनों का कुछ अनुमान बेलारी जिले के अंगरेज कलेक्टर, ए.डी. कैम्पबेल, की सन् 1823 की एक रिपोर्ट से किया जा सकता है। कैम्पबेल लिखता है -

''जिस व्यवस्था के अनुसार भारत की पाठशालाओं में बच्चों को लिखना सिखाया जाता है और जिस ढंग से ऊंचे दर्जे के विद्यार्थी नीचे दर्जे के विद्यार्थियों को शिक्षा देते हैं, और साथ-साथ अपना ज्ञान भी पक्का करते करते हैं, वह सारी प्रणाली निस्संदेह प्रशंसनीय है और इंगलिस्तान में उसका जो अनुसरण किया गया है उसके सर्वथा योग्य है ।''

आगे चलकर कम्पनी के शासन में भारतीय शिक्षा की अवनति और उसके कारणों को बयान करते हुए कैम्पबेल लिखता है -

''इस समय असंख्य लोग ऐसे हैं जो अपने बच्चों को इस शिक्षा का लाभ नहीं पहुंचा सकते, मुझे कहते हुए दुख होता है कि इसका कारण यह है कि सारा देश धीरे-धीरे निर्धन होता जा रहा है। हाल में जब से हिन्दुस्तान के बने हुए सूती कपड़ों की जगह इंगलिस्तान के बने हुए कपड़ों को इस देश में प्रचलित किया गया है तब से यहां के कारीगरों के लिए जीविका निर्वाह के साधन बहुत कम हो गये हैं । हमने अपनी बहुत सी पलटने अपने इलाकों से हटा कर उन देशी राजाओं के दूर दूर के इलाकों में भेज दी हैं, जिसके साथ हमने संधियां की है । हाल ही में अनाज की मांग पर बहुत असर पड़ा है । देश का धन पुराने समय के देशी दरबारों और देशी कर्मचारियों के हाथों से निकल कर यूरोपियनों के हाथों में चला गया है । देशी दरबार और उनके कर्मचारी उस धन को भारत में ही उदारता के साथ खर्च किया करते थे; इसके विपरीत नये यूरोपीयन कर्मचारियों को हमने कानूनन आज्ञा दे दी है कि वे अस्थायी तौर पर भी इस धन को भारत में खर्च न करें । ये यूरोपियन कर्मचारी देश के धन को प्रतिदिन ढो ढोकर बाहर ले जा रहे हैं; इसके कारण भी यह देश दरिद्र होता जा रहा है । सरकारी लगान जिस कड़ाई के साथ वसूल किया जाता है उसमें भी किसी तरह की ढिलाई नहीं की गई, जिससे प्रजा के इस कष्ट में कोई कमी हो सकती । मध्यम श्रेणी और निम्न श्रेणी के अधिकांश लोग अब इस योग्य नहीं रहे कि अपने बच्चों की शिक्षा का खर्च बरदाश्त कर सकें । इसके विपरीत ज्यों ही उनके बच्चों के कोमल अंग थोड़ा बहुत मेहनत कर सकने के योग्य होते हैं, माता-पिता को अपनी जिंदगी की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए उन बच्चों से अब मेहनत मजदूरी करानी पड़ती है ।''

## उद्योग धन्धे और शिक्षा का ह्रास

अर्थात उन्नीसवीं शताब्दी के शुरू में भारत की प्राचीन सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली के नाश का एक मुख्य कारण यह था कि प्राचीन भारतीय उद्योग धंधों के सर्वनाश और कम्पनी की लूट और अत्याचारों के कारण देश उस समय तेजी के साथ निर्धन होता जा रहा था और देश के उन करोडों नन्हें नन्हें बालकों को, जो पहले पाठशालाओं में शिक्षा पाते थे, अपना और अपने मां बाप का पेट पालने के लिए मेहनत मजदूरी में मां बाप का हाथ बटाना पड़ता था।

और आगे चलकर अपने से पहले की हालत और अपने

समय की शिक्षा की हालत की तुलना करते हुए कैम्पबैल लिखता है ।

''इस जिले की लगभग दस लाख आबादी में से इस समय सात हजार बच्चे भी शिक्षा नहीं पा रहे हैं, जिससे पूरी तरह जाहिर है कि शिक्षा में निर्धनता के कारण कितनी अवनति हुई है। बहुत से ग्रामों में जहा पहले पाठशालाएं मौजूद थीं, वहां अब कोई पाठशाला नहीं है और बहुत से दूसरे ग्रामों में जहां पहले बड़ी पाठशालाएं थीं वहां अब केवल अत्यंत धनाढ्‌य लोगों के थोड़े से बालक शिक्षा पाते हैं, दूसरे लोगों के बालक निर्धनता के कारण पाठशाला नहीं जा सकते।''

''इस जिले की अनेक पाठशालाओं की, जिनमें देशी भाषाओं में लिखना, पढ़ना और हिसाब सिखाया जाता है, जैसा कि भारत में सदा से होता रहा है, इस समय यह दशा है । ××× विद्या ××× कभी किसी भी देश में राज दरबार की सहायता के बिना नहीं बढ़ी, और भारत के इस भाग में विज्ञान को देशी दरबारों से जो सहायता और प्रोत्साहन पहले दिया जाता था वह अंगरेजी राज के आने के समय से, बहुत दिन हुए, बंद कर दिया गया है ।

''इस जिले में अब घटते-घटते शिक्षा संबंधी 533 संस्थाएं रह गई हैं और मुझे यह कहते लज्जा आती है कि इनमें से किसी एक को भी अब (अंगरेज) सरकार की ओर से किसी तरह की सहायता नहीं दी जाती।''

## प्राचीन पाठशालाओं की व्यवस्था

इसके बाद प्राचीन भारत में इन असंख्य पाठशालाओं के खर्च की व्यवस्था को बयान करते हुए कैम्पबेल लिखता है -

''इसमें कोई सन्देह नहीं कि पुराने समय में, विशेषकर हिन्दुओं के शासन काल में, विद्या प्रचार की सहायता के लिए बहुत बड़ी रकमें और बड़ी-बड़ी जागीरें राज की ओर से बंधी हुई थीं।''

××× पहले समय में राज की आमदनी का एक बहुत बड़ा हिस्सा विद्या प्रचार को प्रोत्साहन और उन्नति देने में खर्च किया जाता था, जिससे राज का भी मान बढ़ा था । किन्तु हमारे शासन में यहां तक अवनति हुई है कि राज की आमदनी से अब उलटा अज्ञान को उन्नति दी जाती है । पहले जो जबरदस्त सहायता राज की ओर से विज्ञान को दी जाती थी उसके बन्द हो जाने के कारण अब विज्ञान केवल थोड़े से दानशील व्यक्तियों की आकस्मिक उदारता के सहारे ज्यों-त्यों कर जीवित है । भारत के इतिहास में विद्या के इस तरह के पतन का दूसरा समय दिखा सकना कठिन है ।''

**'भारत में अंग्रेजी राज' शीर्षक दो खंड़ों की इस पुस्तक की जब्ती का आदेश जारी करते हुए अदालत ने कहा था, ''चूंकि इस पुस्तक की सारी बातें सच्ची हैं, इसलिए यह अधिक खतरनाक है ।'' भूमिका में पुस्तक का सार बताते हुए सुन्दर लाल कहते हैं : सन् 1757 से 1857 तक सौ साल के अंगरेज कंपनी के शासन में हिन्दोस्तानी सिपाहियों का अपने देश और देशवासियों के खिलाफ जांनिसारी के साथ विदेशी अफसरों का फरमावरदारी करना, हिन्दोस्तानी नरेशों का अंगरेजों के साथ संधियों की शर्तों को ईमानदारी से निबाहना, अंगरेजों का बार बार जानबूझ कर अपनी संधियों और वादों को तोड़ना देशी रियासतों के यूरोपियन नौकरों का पग-पग पर अपने मालिकों के साथ विश्वासघात करना, अंगरेज रेजिडेन्टों का देशी दरबारों में रहकर वहां फूट डलवाना, रिश्वतें देना, गुप्त साजिशें करना, हत्याएं कराना और जाल साजियां करना, देशी नरेशों का कंपनी के साथ 'संधि' और 'मित्रता' के जाल में एक बार फंसकर उससे बिना अपना मान और सर्वस्व दिए बाहर न निकल सकना, ईस्ट इंडिया कम्पनी का , अपनी निर्धारित नीति के अनुसार, भारत की प्राचीन ग्राम-पंचायतों, शिक्षा प्रणाली, हजारों और लाखों पाठशालाओं और हजारों साल के उन्नत उद्योग-धंधों का नाश कर डालना और इन सबके नतीजे में भारत का सौ-सवा सौ साल के अंदर संसार के सबसे अधिक प्रबल, उन्नत तथा खुशहाल देशों की पंक्ति से निकल कर सबसे अधिक निर्बल, अवनत और दरिद्र देशों की पंक्ति तक पहुंचा दिया जाना- इस सबकी अत्यंत दुखकर कहानी इस**

यह सारी कहानी मद्रास प्रांत की है । ठीक इसी तरह की कहानी, महाराष्ट्र और बम्बई प्रांत के विषय में, एलफिन्सटन ने सन् 1824 की एक सरकारी रिपोर्ट में बयान की है, किन्तु उसे दोहराना व्यर्थ है ।

साहित्यिक अवनति

एक और अंगरेज विद्वान वाल्टर हैमिल्टन ने सन् 1828 में सरकारी रिपोर्ट के आधार पर लिखा था -

''भारतवासियों के अन्दर साहित्य और विज्ञान की दिन-प्रतिदिन अवनति होती जा रही है। विद्वानों की तादाद घटती जा

रही है और जो लोग अभी तक विद्याध्ययन करते हैं उनमें भी अध्ययन के विषय बेहद कम होते जा रहे हैं । दर्शन विज्ञान का पढ़ना लोगों ने छोड़ दिया है; और सिवाय उन विद्याओं के, जिनका संबंध विशेष धार्मिक्र कर्मकाण्डों या फलित से है, और किसी भी विद्या का अब लोग अध्ययन नहीं करते । साहित्य की इस अवनति का का मुख्य कारण यह मालूम होता है कि इससे पहले देशी राज में राजा लोग, सरदार लोग और धनवान लोग सब विद्या प्रचार को प्रोत्साहन और सहायता दिया करते थे। वे देशी दरबार अब सदा के लिए मिट चुके हैं और अब वह प्रोत्साहन और सहायता साहित्य को नहीं दी जाती ।''

सारांश यह कि जो कहानी कैम्पबेल ने मद्रास प्रांत की बयान की है वही कहानी वास्तव में सारे ब्रिट्रिश भारत की थी ।

## भारतीय शिक्षा के सर्वनाश के कारण

प्राचीन शिक्षा प्रणाली और शिक्षा संस्थाओं के सर्वनाश के चार मुख्य कारण गिनाए जा सकते हैं -

1. भारतीय उद्योग धन्धों के नाश और कम्पनी की लूट से देश की बढ़ती हुई दरिद्रता ;

2. प्राचीन ग्राम पंचायतों का नाश और उस नाश के कारण लाखों ग्राम पाठशालाओं का अंत ;

3. प्राचीन हिन्दू और मुसलमान नरेशों की ओर से शिक्षा संबंधी संस्थाओं को जो आर्थिक सहायता और जागीरें बंधी हुई थीं, कंपनी के राज में उनका छिन जाना; और

4. नये अंगरेज शासकों की ओर से भारतवासियों की शिक्षा का विधिवत विरोध ।

इस चौथे कारण को अधिक विस्तार के साथ बयान करना जरूरी है । सन् 1757 से लेकर पूरे सौ साल तक लगातार बहस होती रही कि भारतवासियों को शिक्षा देना अंगरेजों की सत्ता के लिए हितकर है या अहितकर । शुरू के दिनों में करीब करीब सब अंगरेज शासक भारतवासियों को शिक्षा दने के विरोधी थे ।

जे.सी. मार्शमैन ने 15 जून, 1853 को पार्लियामेंट की सिलेक्ट कमेटी के सामने गवाही देते हुए कहा था -

''भारत में अंग्रेजी राज के कायम होने के बहुत दिनों के बाद तक भारत वासियों को किसी तरह की भी शिक्षा दने का प्रबल विरोध किया जाता रहा ।''

मार्शमैन बयान करता है कि सन् 1792 में जब ईस्ट इंडिया कम्पनी के लिए नया चार्टर ऐक्ट पास होने का समय आया तो पाार्लियामेंट के एक सदस्य विलबरफोर्स ने नये कानून में एक धारा इस तरह की जोड़नी चाही जिसका जाहिरा अभिप्राय थोड़े से भारत वासियों की शिक्षा का प्रबंध करना था । इस पर पार्लियामेंट के सदस्यों और कम्पनी के हिस्सेदारों ने विरोध किया और विलबरफोर्स को अपनी तजवीज वापस ले लेनी पड़ी ।

## मार्शमैन लिखता है -

'' उस अवसर पर कम्पनी के एक डाइरेक्टर ने कहा कि - 'हम लोग अपनी इसी मूर्खता से अमरीका हाथ से खो बैठे हैं, क्योंकि हमने उस देश में स्कूल और कालेज कायम हो जाने दिए, अब फिर भारत में उसी मूर्खता को दोहराना ठीक नहीं है ।' इसके बीस साल बाद तक, यानी सन् 1813 तक भारतवासियों को शिक्षा देने के विरुद्ध ये ही भाव इंगलिस्तान के शासकों के दिलों में बने रहे ।''

## जातपांत से अंगरेजों को लाभ

सन् 1813 में विलायत के अंदर सर जान मैलकम ने, जो उन विशेष अनुभवी नीतिज्ञों मे से था जिन्होंने 19 वीं सदी के शुरू में भारत के अंदर अंगरेजी साम्राज्य को विस्तार दिया, बिट्रिश पार्लियामेंट की जांच कमेटी के सामने गवाही देते हुए कहा -

''××× इस समय हमारा साम्राज्य इतनी दूर तक फैला हुआ है कि जो असाधारण ढंग की हुकुमत हमने उस देश में कायम की है उसके बने रहने के लिए केवल एक बात का हमें सहारा है, वह यह कि जो बड़ी-बड़ी जातियां इस समय अंग्रेज सरकार के अधीन हैं वे सब एक दूसरे से अलग-अलग हैं और जातियों में भी फिर अनेक जातियां और उप जातियां हैं; जब तक ये लोग इस तरह विभाजित रहेंगे, तब तक कोई भी बलवा हमारी सत्ता को नहीं हिला सकता। ××× जितनी जितनी लोगों में एकता पैदा होती जायेगी और उनमें वह बल आता जाएगा जिससे वे वर्तमान अंगरेजी सरकार की सत्ता को अपने ऊपर से हटाकर फेंक सकें, उतना ही हमारे लिए शासन कठिन होता जाएगा ।''

इसलिए -

''मेरी राय है कि कोई इस तरह की शिक्षा, जिससे हमारी भारतीय प्रजा के इस समय के जातपांत के भेद धीरे-धीरे टूटने की संभावना हो,या जिसके जरिए उनके दिलों से यूरोपियन का आदर कम हो, अंगरेजी राज के राजनैतिक बल को नहीं बढ़ा सकती ××× ।''

जाहिर है कि सर जान मैलकम भारतवासियों को सदा के लिए जातपांत और मत-मतांतरों के भेदों में फंसाए रखना, आपस में एक दूसरे को लड़ाए रखना और उन्हें अशिक्षित रखना अंगरेजी राज की सलामती के लिए आवश्यक समझता था ।

## सन् 1813 की मंजूरी

सन् 1813 में इंगलिस्तान की पार्लियामेंट ने जो चार्टर ऐक्ट पास किया, उसमें एक धारा यह भी थी कि - 'ब्रिटिश भारत की आमदनी की बचत में से गवर्नर जनरल को इस बात का अधिकार होगा कि हर साल एक लाख रूपये तक साहित्य की उन्नति और पुनरुज्जीवन के लिए और विद्वान भारतवासियों को प्रोत्साहन देने के काम में लाएं ।' किंतु यह समझना भूल होगी कि यह एक लाख रुपये सालाना की रकम वास्तव में भारत वासियों की शिक्षा के लिए मंजूर की गई थी । इस मजूरी के साथ-साथ जो पत्र डाइरेक्टरों ने 3 जून 1814 को गवर्नर जनरल के नाम भेजा उसमें साफ लिखा हे कि यह रकम 'राजनैतिक दृष्टि से भारत के साथ अपने संबंध को मजबूत रखने के लिए, 'बनारस' और एक दो और स्थानों के लिए पंडितों को देने के लिए ''अपनी और विचारवान भारतवासियों के हृदय के भावों का पता लगाने के लिए'', ''प्राचीन संस्कृत साहित्य का अंगरेजी में अनुवाद कराने केलिए '', ''संस्कृत पढ़ने की इच्छा रखने वाले अंगरेजों को सहायता देने के लिए'', ''उस समय की रही सही भारतीय शिक्षा संस्थाओं का पता लगाने के लिए और अपने साम्राज्य के स्थायित्व की दृष्टि से अंगरेजों और भारतीय नेताओं में अधिक मेलजोल पैदा करने के उद्देश्य से'' मंजूर की गई है । इसी पत्र में यह भी साफ लिखा था कि इस रकम की मदद से कोई ''सार्वजनिक कालेज न खोले जायें''।

## लिओनेल स्मिथ का डर

भारतवासियोंकी शिक्षा की ओर अंगरेज शासकों का विरोध इसके बहुत दिनों बाद तक जारी रहा। सन् 1831 की जांच के समय सर जान मैलकम के बीस साल पहले के विचारों को दोहराते हुए मेजर जनरल सर लिओनेल स्मिथ ने कहा -

'शिक्षा का नतीजा यह होगा कि वे सब साम्प्रदायिक और धार्मिक पक्षपात जिनके द्वारा हमने अभी तक मुल्क को वश में रखा है - और हिन्दू मुसलमानों को एक दूसरें से लड़ाए रखा है, इत्यादि --- दूर हो जायेंगे; शिक्षा का नतीजा यह होगा कि इन लोगों के दिमाग खुल जाऐंगे और उन्हें अपनी विशाल शक्ति का पता लग जायेगा ।''

## अंग्रेजी राज के लिए शिक्षा की आवश्यकता

किंतु 18 वीं शताब्दी के अंत से ही इस मामले में अंगरेज शासकों के विचारों में अंतर पैदा होना शुरू हो गया । कारण यह था कि धीरे धीरे अंगरेजों को भारत के अंदर दो विशेष कठिनाइयां अनुभव होने लगीं । (1) चूंकि शिक्षित भारतवासियों की तादाद दिन-दिन घटती जा रही थी, इसलिए अंगरेजों को अपने सरकारी महकमों और नयी अदालतों के लिए योग्य हिंदू और मुसलमान कर्मचारियों की कमी महसूस होने लगी, जिनके बिना उन महकमों और अदालतों का चल सकना असभव था; और (2) उन्हें थोड़े से इस तरह के भारतवासियों की भी आवश्यकता थी, जिनके जरिए भारतीय जनता के हृदय के भावों का उन्हें पता लगता रहे और जिनकी मदद से वे जनता के भावों को अपनी ओर मोड़ सकें ।

सन् 1830 की पार्लियामेन्टरी कमेटी की रिपोर्ट में इन दोनों आवश्यकताओं का बार-बार जिक्र आता है और साफ लिखा है कि कलकत्ते का 'मुसलमानों का मदरसा' और बनारस का 'हिन्दू संस्कृत कालेज' दोनों अठारहवीं सदी के अन्त में ठीक इन्हीं उद्देश्यों से कायम किए गए थे । इसी उद्देश्य से सन् 1821 में पूना का डेकन कालेज, सन् 1835 में कलकत्ते का मेडिकल कालेज और सन् 1847 में रुड़की की इंजीनियरिंग कालेज कायम हुए ।

डाइरेक्टरों ने 5 सितम्बर, सन् 1827 के एक पत्र में गर्वनर जनरल को लिखा कि इस शिक्षा का धन ''उच्च और मध्यम श्रेणी के उन भारतवासियों के ऊपर खर्च किया जाए, जिनमें से आपको अपने शासन के कामों के लिए सबसे अधिक योग्य देशी एजेण्ट मिल सकते हैं, और जिनका अपने बाकी देशवासियों के ऊपर सबसे अधिक प्रभाव है।''

## 1833 में दस लाख की मंजूरी

मतलब यह कि बिना पढ़े लिखे भारतवासियों की सहायता के केवल अंगरेजों के बल ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य का चल सकना असंभव था। इसीलिए थोड़े बहुत भारतवासियों को किसी न किसी तरह की शिक्षा देना भारत के विदेशी शासकों के लिए अनिवार्य हो गया। इस काम के लिए सन् 1813 वाली एक लाख रुपये सालाना की मंजूरी को सन् 1833 में बढ़ा कर दस लाख रुपये सालाना कर दिया गया, क्योंकि इन बीस साल के अन्दर भारत का बहुत अधिक भाग विदेशी राज के रंग में रंगा जा चुका था ।

सन् 1757 से लेकर 1857 तक भारतवासियों की शिक्षा के बारे में अंगरेज शासकों के सामने मुख्य प्रश्न केवल यह था कि भारतवासियों को शिक्षा देना साम्राज्य के स्थायित्व की दृष्टि से हितकर है या अहितकर, और यदि हितकर या आवश्यक है तो उन्हें किस तरह की शिक्षा देना उचित है ।

## ईसाई धर्म प्रचार

उस समय अनेक अंगरेज नीतिज्ञ भारतवासियों में ईसाई धर्म

का प्रचार करने के पक्षपाती थे । इन लोगों को ईसाई धर्मग्रन्थों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराने, इंगलिस्तान से आने वाले पादरियों को सहायता देने और सरकार की ओर से मिशन स्कूलों को आर्थिक मदद करने की आवश्यकता अनुभव हो रही थी । यह भी एक कारण था कि जिससे अनेक अंग्रेज भारतवासियों को शिक्षा देने के पक्ष में हो गए । सन् 1813 के बाद की बहसों में इस बात का बार बार जिक्र आता है ।

## शिक्षित भारतवासियों से डर

सन् 1853 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के लिए अन्तिम चार्टर एक्ट पास हुआ। उस समय भारतवासियों की शिक्षा के प्रश्न पर अनेक अनुभवी अंगरेज नीतिज्ञों और विद्वानों की गवाहियां जमा की गईं । इन गवाहियों में से नमूने के तौर पर दोनों पक्षों की एक-एक या दो-दो गवाहियां नकल करना काफी है ।

4 अगस्त, सन् 1853 को मेजर रालैण्डसन ने, जो 17 साल तक मद्रास प्रान्त के कमाण्डर-इन-चीफ के यहां फारसी अनुवादक रह चुका था और वहां की शिक्षा कमेटी का मन्त्री भी रह चुका था, ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की कमेटी के सामने यह गवाही दी -

प्रश्न - आपने यह राय प्रकट की है कि भारतवासियों को शिक्षा देने का नतीजा यह होता है कि वे अंगरेज सरकार के विरुद्ध हो जाते हैं । क्या आप यह समझाएंगे कि इसका कारण क्या है और सरकार की और उनकी शत्रुता किस ढंग की और कैसी होती है?

उत्तर - मेरा अनुभव यह है कि भारतवासियों को ज्यों ज्यों ब्रिटिश भारतीय इतिहास के भीतरी हाल का पता लगता है और आम तौर पर यूरोप के इतिहास का ज्ञान होता है, त्यों त्यों उनके मन में यह विचार उत्पन्न होता है कि भारत जैसे एक विशाल देश का मुट्ठी भर विदेशियों के कब्जे में होना एक बहुत बड़ा अन्याय है; इससे स्वभावत: उनके मन में यह इच्छा उत्पन्न हो जाती है कि वे अपने देश को इस विदेशी शासन से स्वतंत्र करने में सहायक हों और चूंकि इस विचार को दूर करने वाली कोई बात नहीं होती और न उनमें वफादारी का भाव ही पक्का होता है इसलिए ब्रिटिश सरकार की ओर द्रोह का भाव इन लोगों में पैदा हो जाता है । ××× मैंने देखा है कि हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनों में यह भाव मौजूद है और मुसलमानों में अधिक है । ××× खासकर जब ये लोग ब्रिटिश साम्राज्य के रहस्य को जान जाते हैं तो उनके दिलों में असन्तोष का भाव पैदा हो जाता है और आशा जाग उठती है ××× ।

इसी प्रश्नोत्तर में यह भी साफ सुझाया गया कि यदि शिक्षा के साथ भारतवासियों के दिलों में यह भय उत्पन्न करने का भी प्रयत्न किया जाये कि यदि अंग्रेज भारत से चले गये तो उत्तर की दूसरी जातियां आकर भारत पर राज करने लगेंगी या भारत में अराजकता फैल जायेगी, तो इसका नतीजा कहां तक हितकर होगा।

## कुछ विपरीत विचार

अनेक अंगरेजों के विचार मेजर रालैण्डसन के विचारों से मिलते थे । किन्तु कुछ के विचार इसके विपरीत थे । उनका ख्याल था कि अशिक्षत भारतवासी शिक्षित भारतवासियों की अपेक्षा विदेशी शासन के लिए अधिक खतरनाक होते हैं और भारत वासियों को केवल पश्चिमी शिक्षा देकर ही उन्हें राष्ट्रीयता यानी भारतीयता के भावों से दूर रखा जा सकता है और विदेशी राज के लिए उपयोगी तन्त्र बनाया जा सकता है । प्रसिद्ध नीतिज्ञों में से सर फ्रेडरिक हैलिडे की गवाही, जो बंगाल का पहला लेफ्टिनेण्ट गवर्नर था और मार्शमैन की गवाही इसी मतलब की थी ।

## पूर्वी और पश्चिमी शिक्षा पर बहस

एक और महत्वपूर्ण प्रश्न जो 19 वीं शताब्दी के शुरू से भारत के उन अंगरेज शासकों के सामने आया जो भारतवासियों को शिक्षा देने के पक्ष में थे, यह था कि किस तरह की शिक्षा देना अधिक उपयोगी होगा । दो अलग अलग विचारों के लोग उस समय के अंगरेजों से मिलते हैं । एक वे जो भारतवासियों को प्राचीन भारतीय साहित्य, भारतीय विज्ञान और संस्कृत, फारसी, अरबी और देशी भाषाएं पढ़ाने के पक्ष में थे और दूसरे वे जो उन्हें अंगरेजी भाषा, पश्चिमी साहित्य और पश्चिमी विज्ञान की शिक्षा देना अपने लिए अधिक हितकर समझते थे । पहले विचार के लोगों को 'ओरियंटलिस्ट' ओर दूसरे विचार के लोगों को 'आक्सिडेंटलिस्ट' कहा जाता है । अनेक वर्षों तक इन दोनों विचार के अंगरेजों में खूब वाद-विवाद होता रहा। इसी बहस के दिनों में सन् 1834 में भारत के अंदर लार्ड मैकाले का आगमन हुआ, जिसके चरित्र का थोड़ा सा जिक्र हम पिछले अध्याय में कर आए हैं । मैकाले से पहले, करीब 12 साल तक, इस प्रश्न के ऊपर बहुत तीव्र वाद-विवाद होता रहा है । मैकाले के विचारों का प्रभाव इस प्रश्न पर निर्णायक साबित हुआ । मैकाले भारतवासियों को प्राचीन भारतीय साहित्य की शिक्षा देने के विरुद्ध और उन्हें अंगरेजी भाषा, अंगरेजी साहित्य और अंगरेजी विज्ञान सिखाने के पक्ष में था । मैकाले का निर्णय भारत वासियों के लिए अंत में हितकर रहा हो या अहितकर, किंतु मैकाले का अपना उद्देश्य केवल यह था कि उच्च श्रेणी के भारतवासियों में राष्ट्रीयता के भावों को उत्पन्न होने से रोका जाए और उन्हें अंगरेजी सत्ता के चलाने के लिए उपयोगी तंत्र बनाया जाए। अपने पक्ष का समर्थन

करते हुए मैकाले ने एक स्थान पर लिखा है -

''हमें भारत में  इस तरह की श्रेणी पैदा कर देने का भरसक प्रयत्न करना चाहिये जो कि हमारे और उन करोड़ों भारतवासियों के बीच, जिन पर हम शासन करते हैं, एक दूसरे को समझाने बुझाने का काम दे सके । ये लोग ऐसे होने चाहिए जो कि केवल खून और रंग की दृष्टि से हिन्दोस्तानी हों, किन्तु जो अपनी रुचि, भाषा, भावों और विचारों की दृष्टि से अंगरेज हों ।''

## बेंटिक का फैसला

गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बैंटिक मैकाले का बड़ा दोस्त और उसके समान विचारों का था। मैकाले की इस रिपोर्ट के ऊपर 7 मार्च, 1835 को बेंटिक ने आज्ञा दे दी कि -

''जितना धन शिक्षा के लिए मंजूर किया जाए उसका सबसे अच्छा उपयोग यही है कि उसे केवल अंगरेजी शिक्षा के ऊपर खर्च किया जाये ।''

मैकाले के विचारों और उन पर लार्ड बेंटिक के फैसले के नतीजे को बयान करते हुए 5  जुलाई सन् 1853 को प्रसिद्ध इतिहास लेखक प्रोफेसर एच. एच. विलसन ने पार्लियामेंट की सिलेक्ट कमेटी के सामने कहा -

''वास्तव में हमने अंगरेजी पढ़े लिखे लोगों की अलग जाति बना दी है जिन्हें अपने देशवासियों के साथ या तो सहानुभति है ही नहीं और यदि है तो बहुत ही कम ।''

## देशी भाषाओं को दबाना

अंगरेजी भाषा और साहित्य की शिक्षा के साथ साथ जहां तक हो सके देशी भाषाओं को दबाना भी मैकाले और बेंटिक, दोनों का उद्देश्य था । इतिहास के लेखक डाक्टर डफ ने इस बारे में बेंटिक और मैकाले की नीति की सराहना करते हुए तुलना करके यह दिखलाया  है कि जब कभी प्राचीन रोमन लोग किसी देश को विजय करते थे तो उस देश की भाषा और साहित्य को यथाशक्ति दबा कर वहां के उच्चश्रेणी के लोगों में रोमन भाषा, रोमन साहित्य और रोमन आचार-विचार के प्रचार का प्रयत्न करते थे, और साथ ही यह दर्शाया है कि यह नीति रोमन साम्राज्य के लिए कितनी हितकर साबित हुई, और अंत में लिखा है -

''××× मैं यह विचार प्रकट करने का साहस करता हूं कि भारत के अंदर अंगरेजी भाषा और अंगरेजी साहित्य को फैलाने और उसे उन्नति देने का लार्ड विलियम बेंटिक का कानून ××× भारत के अन्दर अंगरेजी राज के अब तक के इतिहास में कुशल राजनीति की सबसे जबरदस्त चाल मानी जायेगी ।''

डाक्टर डफ ने अपने से पहले के एक दूसरे अंगरेज विद्वान के विचारों का समर्थन करते हुए लिखा है कि भाषा का प्रभाव इतना जबरदस्त होता है कि जिस समय तक भारत के अंदर देशी नरेशों के साथ अंगरेजों का पत्र व्यवहार फारसी भाषा में होता रहेगा, उस समय तक भारतवासियों की भक्ति और उनका प्रेम दिल्ली के सम्राट की ओर बराबर बना रहेगा । लार्ड बेंटिक के समय तक देशी नरेशों के साथ कम्पनी का सारा पत्र-व्यवहार फारसी भाषा में हुआ करता था। बेंटिक पहला गर्वनर जनरल था जिसने यह आज्ञा दे दी और नियम कर दिया कि भविष्य में सारा पत्र व्यवहार फारसी की जगह अंगरेजी भाषा में हुआ करे ।

आयरलैंड के अंदर भी आइरिश भाषा को दबाने और यदि संभव हो तो आइरिश लोगों को अंगरेज बना डालने के लिए'', वहां की अंगरेज सरकार ने समय समय पर अनेक अनोखे कानून पास किए ।

## लार्ड मैकाले की रिपोर्ट

सन् 1835 के बाद से अंगरेज शासकों का मुख्य लक्ष्य भारत में अंगरेजी शिक्षा के प्रचार की ओर ही रहा । फिर भी 'ओरिएंटलिस्ट' और 'आक्सिडेंटलिस्ट' दलों का थोड़ा बहुत विरोध इसके बीस साल बाद तक जारी रहा । कुछ अंगरेज शासक भारतवासियों को किसी तरह की भी शिक्षा देने में बराबर संकोच करते रहे । यहां तक कि लार्ड मैकाले की सन् 1835 की रिपोर्ट 29 साल बाद सन् 1864 में पहली बार प्रकाशित की गई । पर अंत में पल्ला अंगरेजी शिक्षा के पक्ष वालों का ही भारी रहा ।

भारत के अंगरेज शासकों की शिक्षा नीति और बाद की अंगरेजी शिक्षा के उद्देश्य को साफ कर देने के लिए, हम अंगरेजी शिक्षा के प्रबल पक्षपाती लार्ड मैकाले के बहनोई, सर चार्ल्स ट्रेवेलियन, के उन विचारों की नीचे नकल करते हैं जो ट्रेवेलियन ने सन् 1853 की पार्लियामेंटरी कमेटी के सामने प्रकट किए ।

## अंगरेजी शिक्षा का उद्देश्य

सर चार्ल्स ट्रेवेलियन ने सन् 1853 की पार्लियामेंटरी कमेटी के सामने ''भारत की अलग-अलग शिक्षा प्रणालियों के अलग-अलग राजनैतिक नतीजे'' शीर्षक से एक लेख लिख कर पेश किया। यह लेख इतने महत्व का है और अंग्रेज सरकार की शिक्षा नीति का इतना अच्छा द्योतक है कि उसके कुछ अंशों का यहां नकल करना आवश्यक है । भारतवासियों को अरबी और संस्कृत पढ़ाने और उनके प्राचीन विचारों और प्राचीन राष्ट्रीय साहित्य को जीवित रखने के बारे में सर चार्ल्स ट्रेवेलियन लिखता है कि ऐसा करने से -

''मुसलमानों को सदा यह बात याद रहेगी कि हम विधर्मी ईसाइयों ने मुसलमानों के अनेक सुन्दर से सुन्दर प्रदेश उनसे छीन कर अपने अधीन कर लिए हैं और हिन्दुओं को सदा यह याद रहेगा कि अंगरेज लोग इस तरह के नापाक दरिन्दे हैं जिनके साथ किसी तरह का मेलजोल रखना लज्जाजनक और पाप है । हमारे बड़े से बड़े शत्रु भी इससे अधिक और कुछ इच्छा नहीं कर सकते कि हम इस तरह की विद्याओं का प्रचार करें जिनसे मानव स्वभाव के उग्र से उग्र भाव हमारे विरुद्ध भड़क उठें।

''इसके विपरीत अंगरेजी साहित्य का प्रभाव अंगरेजी राज के लिए हितकर हुए बिना नहीं रह सकता । जो भारतीय युवक हमारे साहित्य द्वारा हमसे भली भांति परिचित हो जाते हैं, वे हमें विदेशी समझना प्राय: बन्द कर देते हैं । वे हमारे महापुरुषों का जिक्र उसी उत्साह के साथ करते है जिस उत्साह के साथ कि हम करते हैं । हमारी ही जैसी शिक्षा, हमारी ही जैसी रुचि और हमारे ही जैसे रहन सहन के कारण इन लोगों में हिन्दोस्तानियत कम हो जाती है और अंगरेजियत अधिक आ जाती है । ××× फिर बजाय इसके कि वे हमारे तीव्र विरोधी हों, या यदि हमारे अनुयायी भी हों तो उनके हृदय में हमारी ओर से क्रोध भरा रहे, वे हमारे जोशीले और चतुर मददगार बन जाते हैं । ××× फिर वे हमें अपने देश से बाहर निकालने के प्रचण्ड उपाय सोचना बन्द कर देते हैं ×××''।

''××× जब तक हिन्दोस्तानियों को अपनी पहली स्वाधीनता के बारे में सोचने का मौका मिलता रहेगा, तब तक उनके सामने अपनी दशा सुधारने का एकमात्र उपाय यह रहेगा कि वे अंगरेजों को तुरंत देश से निकाल कर बाहर कर दें । पुराने तर्ज के भारतीय देशभक्तों के सामने इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है । ××× भारतीय राष्ट्र के विचारों को दूसरी ओर मोड़ने का केवल एक ही उपाय है । वह यह कि उनके अन्दर पाश्चात्य विचार पैदा किये जायें। जो युवक हमारे स्कूलों और कालेजों में पढ़ते हैं वे फिर उस जंगली तानाशाही को, जिसके अधीन उनके पूर्वज रहा करते थे, घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं, और फिर अपनी राष्ट्रीय संस्थाओं को अंगरेजी ढंग पर ढालने की आशा करने लगते हैं। ××× बजाय इसके कि उनके दिलों में यही विचार सबसे ऊपर हो कि हम अंगरेजों को निकाल कर समुद्र में फेंक दें, वे इसके विपरीत अब उन्नति का कोई ऐसा विचार तक नहीं कर सकते जो उनके ऊपर अंगरेजी राज को रिविट लगाकर और भी अधिक पक्का न कर दे, और जिनके द्वारा वे अंगरेजों की शिक्षा और अंगरेजों की रक्षा पर सर्वथा निर्भर न हो जाएं ××× ।''

''××× हमारे पास उपाय केवल यह है कि हम भारतवासियों को यूरोपियन ढंग की उन्नति में लगा दें, ××× फिर पुराने ढंग पर भारत को स्वाधीन करने की इच्छा ही उनमें से जाती रहेगी और उनका लक्ष्य ही यह न रह जाएगा। देश में अचानक राजक्रान्ति फिर असंभव हो जाएगी और हमारे लिए भारत पर अपना साम्राज्य कायम रखना बहुत काल के लिए असंदिग्ध हो जायेगा । ××× भारतवासी फिर हमारे विरुद्ध विद्रोह न करेंगे ××× फिर उनके राष्ट्र भर के प्रयत्न यूरोपियन शिक्षा प्राप्त करने और उसे फैलाने और अपने यहां यूरोपियन संस्थाएं कायम करने में ही पूरी तरह लगे रहेंगे, जिससे हमें कोई हानि न हो पाएगी । शिक्षित भारतवासी ××× स्वभावत: हमसे चिपटे रहेंगे। ××× हमारी सारी प्रजा में किसी भी श्रेणी के लोगों के लिए हमारा रहना इतना अनिवार्य नही है जितना उन लोगों के लिए, जिनके विचार अंगरेजी सांचे में ढाले गए हैं । ये लोग शुद्ध भारतीय राज के काम के ही नहीं रह जाते; यदि जल्दी से देश में स्वदेशी राज फिर कायम हो जाए तो उन्हें उससे हर तरह का भय रहता है; ××× ।

''××× मुझे आशा है कि थोड़े ही दिनों में भारतवासियों का संबंध हमारे साथ वैसा ही हो जाएगा जैसा किसी समय हमारा रोमन लोगों के साथ था । रोमन विद्वान टैसीटस लिखता है कि जूलियस ऐग्रीकोला ( जो ईसा से 78 साल बाद इंगलिस्तान का रोमन गवर्नर नियुक्त हुआ था और जिसने उस देश में रोमन साम्राज्य की नींवों को पक्का किया) की यह नीति थी कि बड़े बड़े अंग्रेजों के लड़कों को रोमन साहित्य और रोमन विज्ञान की शिक्षा दी जाए ओर उनमें रोमन सभ्यता के ऐश आराम की रुचि पैदा कर दी जाए । हम सब जानते हैं कि जूलियस एग्रीकोला की यह नीति इंगलिस्तान में कितनी सफल साबित हुई । यहां तक कि जो अंगरेज पहले रोमन लोगों के कट्टर शत्रु थे वे शीघ्र ही उनके विश्वासपात्र और उनके वफादार मित्र बन गए ; और उन अंगरेजों के पूर्वजों ने जितने प्रयत्न अपने देश पर रोमन लोगों के हमले को रोकने के लिए किए थे उससे कहीं अधिक जोरदार प्रयत्न अब उनके वंशज रोमन लोगों को अपने यहां बनाए रखने के लिए करने लगे । हमारे पास रोमन लोगों से कहीं अधिक बढ़ कर उपाय मौजूद हैं, इसलिए हमारे लिए यह शर्म की बात होगी यदि हम भी रोमन लोगों की तरह भारतवासियों के मन में यह भय उत्पन्न न कर दें कि यदि हम जल्दी से देश से निकल गए तो तुम लोगों पर भयंकर विपत्ति आ जाएगी ××× ।

''ये विचार मैंने केवल अपने दिमाग से सोच कर ही नहीं निकाले, वरन स्वयं अनुभव करके और देखभाल करके मुझे इन नतीजों पर पहुंचना पड़ा है । मैंने कई साल हिन्दास्तान के ऐसे हिस्सों में बिताए जहां हमारा राज अभी नया-नया जमा था, जहां पर कि हमने लोगों के भावों को दूसरी ओर मोड़ने की अभी कोई कोशिश भी नही की थी और जहां पर कि उनके राष्ट्रीय विचारों में अभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। उन प्रान्तों में छोटे और बड़े,

धनी और दरिद्र, सब लोगों के सामने केवल अपनी राजनैतिक दशा सुधारने की ही एकमात्र चिन्ता थी । उच्च श्रेणी के लोगों के दिलों में यह आशा बनी हुई थी कि वे फिर से अपने प्राचीन प्रभुत्व को प्राप्त कर लें; और नीचे की श्रेणी के लोगों में यह आशा बनी हुई थी कि यदि देशी राज फिर से कायम हो गया तो धन और वैभव प्राप्त करने के मार्ग हमारे लिए फिर से खुल जाएंगे । जिन समझदार भारतवासियों को औरों की अपेक्षा हमसे अधिक प्रेम था उन्हें भी अपनी कौम की पतित अवस्था को सुधारने का इसके सिवा और कोई उपाय न सूझता था कि अंगरेजों को तुरन्त देश से निकाल कर बाहर कर दिया जाए। इसके बाद मैं कुछ साल बंगाल में रहा । वहां मैंने शिक्षित भारतवासियों में बिल्कुल दूसरी तरह के विचार देखे । अंगरेजों के गले काटने का विचार करने के स्थान पर, वे लोग अंगरेजों के साथ जूरी बन कर अदालतों में बैठने या बेन्च मजिस्ट्रेट बनने की आकांक्षाएं कर रहे थे ××× ।

## ट्रेवेलियन के ओर अधिक स्पष्ट विचार

सर चार्ल्स ट्रेवेलियन के इस लेख के बारे में पार्लियामेंट की कमेटी के सदस्यों और ट्रेवेलियन में कई दिन तक प्रश्नोत्तर होता रहा, जिसमें ट्रेवेलियन ने और अधिक स्पष्टता के साथ अपने विचारों को दोहराया और उनका समर्थन किया। इस प्रश्नोत्तर में ही 23 जून, 1853 को ट्रेवेलियन ने कमेटी के सामने बयान किया-

''अपने यहां की शुद्ध स्वदेशी पद्धति के अनुसार मुसलमान लोग हमें 'काफिर' समझते हैं, जिन्होंने कि इसलाम की कई सर्वोत्तम बादशाहतें मुसलमानों से छीन ली हैं ××× उसी प्राचीन स्वदेशी विचार के अनुसार हिन्दू हमें 'म्लेच्छ' समझते हैं अर्थात् इस तरह के अपवित्र विधर्मी जिनके साथ किसी तरह का भी सामाजिक संबंध नहीं रखा जा सकता; और वे सब मिल कर, अर्थात् हिन्दू और मुसलमान दोनों, हमें इस तरह के आक्रामक विदेशी समझते हैं जिन्होंने उनका देश उनसे छीन लिया है और उनके लिए धन और मान प्राप्त करने के सब रास्ते बंद कर दिए हैं । यूरोपियन शिक्षा देने का नतीजा यह होता है कि भारतवासिययों के विचार एक बिल्कुल दूसरी ही दिशा में मुड़ जाते हैं । पाश्चात्य शिक्षा पाए हुए युवक स्वाधीनता के लिए प्रयत्न करना बन्द कर देते हैं ××× वे फिर हमें अपना शत्रु और राज्यापहारी नहीं समझते, बल्कि हमें अपना मित्र, अपना मददगार और बलवान और उपकारी व्यक्ति समझने लगते हैं ××× वे यह भी समझने लगते हैं कि भारतवासी अपने देश के पुनरुज्जीवन के लिए जो कुछ इच्छा भी कर सकते हैं वह धीरे-धीरे अंगरेजों के ही संरक्षण में संभव है, कभी न कभी एक दिन के अन्दर हमारा अस्तित्व भारत से मिट जाए । वास्तव में जो लोग इस ढंग से भारत की उन्नति की आशा कर रहे हैं, वे इस लक्ष्य को सामने रख कर हमारे विरुद्ध लगातार षडयन्त्र और योजनाएं रचते हैं। इसके विपरीत नयी और उन्नत पद्धति के अनुसार विचार करने वाले भारतवासी यह समझते हैं कि उनका उद्देश्य बहुत धीरे-धीरे पूरा होगा और उन्हें अन्तिम लक्ष्य तक पहुंचते पहुंचते संभव है युग बीत जाएं ।''

## भारत की पराधीनता को चिरस्थायी करना

जांच कमेटी के अध्यक्ष ने ट्रेवेलियन से और अधिक स्पष्ट शब्दों में पूछा कि आपकी तजबीज का अंतिम लक्ष्य भारत और इंगलिस्तान के राजनैतिक संबंध को तोड़ना है या उसे सदा के लिए कायम रखना है । इस पर ट्रेवेलियन ने फिर उत्तर दिया-

''××× मुझे विश्वास है कि भारतवासियों को शिक्षा देने ××× का अन्तिम परिणाम यह होगा कि भारत और इंगलिस्तान का पृथक हो सकना दीर्घ और अनिश्चित काल के लिए टल जाएगा ××× यदि इसके विरुद्ध नीति का अनुसरण किया गया ××× तो नतीजा यह होगा कि किसी भी समय हम भारत से निकाले जा सकते हैं, और निस्सन्देह बहुत जल्दी और जिल्लत के साथ निकाल दिए जाएंगे ।××× ''

× × ×

''मैं एक ऐसा रास्ता बता रहा हूं जो हमारे राज के बने रहने के लिए सबसे अधिक हितकर होगा । अनेक बरसों तक खूब अच्छी तरह सोच समझ कर मैंने ये विचार कायम किये हैं । मुझे विश्वास है कि मैं इस विषय को पूरी तरह समझता हूं । ××× मैं एक परिचित उदाहरण आपके सामने पेश करता हूं । मैं बारह वर्ष भारत में रहा। इनमें से पहले 6 वर्ष मैंने उत्तर भारत में गुजारे । मेरा मुख्य स्थान दिल्ली था। शेष छह वर्ष मैंने कलकत्ते में बिताए । जहां पर मैंने पहले छह वर्ष गुजारे वहां पर पुराने शुद्ध देशी विचारों का राज था, वहां पर लगातार युद्ध और युद्धो की ही अफवाहें सुनने में आती थीं । उत्तर भारत में भारतवासियों की देशभक्ति केवल एक ही रूप धारण करती थी, वे हमारे विरुद्ध साजिशें करते रहते थे, हमारे विरुद्ध विविध शक्तियों को मिलाने की तजवीजें सोचते रहते थे, इत्यादि । उसके बाद मैं कलकत्ते आया । वहां मैंने बिल्कुल दूसरी हालत देखी। वहां पर लोगों का लक्ष्य था - स्वतंत्र अखबार निकालना, म्युनिसिपैल्टियां कायम करना, अंगरेजी शिक्षा फैलाना, अधिकाधिक हिन्दोस्तानियों को सरकारी नौकरियां दिलवाना और इसी तरह की और अनेक बातें ।''

इस पर फिर लार्ड मांटीगल ने ट्रेवेलियन से पूछा -

''अब अनुमान कीजिए कि इन दोनों में से एक मार्ग का अनुसरण किया जाए; पहला यह कि भारतवासियों को शिक्षा देने और नौकरियां देने का विचार छोड़ दिया जाए और दूसरा यह कि उन्हें अधिक शिक्षा दी जाए और उचित अहतियात के साथ उन्हें

अधिकाधिक नौकरियां दी जाएं । आपकी राय में इन दोनों मार्गों में से किस मार्ग पर चलने से हिन्दोस्तान और इंगलिस्तान का संबंध अधिक से अधिक देर तक कायम रह सकता है ?''

ट्रेवेलियन ने उत्तर दिया -

''निस्सन्देह शिक्षा को बढ़ाने और भारतवासियों को अधिकाधिक नौकरियां देने से; मुझे इस बात में किसी तरह का जरा सा भी शक नहीं है ।''

## इंगलिस्तान के प्रभुत्व को कायम रखना

सर चार्ल्स ट्रेवेलियन या उस विचार के दूसरे अंगरेजों के बयानों से अधिक वाक्य नकल करने की आवश्यकता नहीं है। निस्सन्देह ठीक यही विचार बेंटिक और मैकाले के थे। भारत के अन्दर अंगरेजी शिक्षा के प्रचार का एकमात्र उद्देश्य राजनैतिक था और वह उद्देश्य यह था कि भारत के ऊपर इंगलिस्तान के राजनैतिक प्रभुत्व को अनन्त काल तक के लिए कायम रखा जाए ।

## एजूकेशन डिसपैच

सन् 1853 की तहकीकात के बाद कम्पनी के डाइरेक्टरों ने 19 जुलाई, सन् 1854 को गवर्नर जनरल लार्ड डलहौजी के नाम वह प्रसिद्ध खरीता भेजा, जो सन् 1854 के 'एजूकेशन डिसपैच' के नाम से प्रसिद्ध है, और जिसे 'वुड्स डिसपैच' भी कहते हैं, क्योंकि सर चार्ल्स वुड उस समय कम्पनी के बोर्ड आफ कण्ट्रोले का प्रेसीडेण्ट था। बोर्ड आफ कण्ट्रोल के प्रेसीडेण्ट का पद बाद के (1929) भारत मंत्री के पद के समान था।

## भारत को इंगलिस्तान की मण्डी बनाना

इस पत्र में डाइरेक्टरों ने अपनी भारत हितैषिता की काफी डींग हांकी है, किन्तु पत्र में यह भी लिखा है कि शिक्षा की इस नयी योजना का उद्देश्य ''शासन के हर महकमें के लिए आपको विश्वसनीय और होशियार नौकर दिलवाना है'' और इसका एक उद्देश्य इस बात को ''पक्का कर लेना है कि इंगलिस्तान के उद्योग धन्धों के लिए जिन अनेक पदार्थों की आवश्यकता होती है और जिनकी इंगलिस्तान की हर श्रेणी के लोगों में खूब खपत होती है, वे सब पदार्थ अधिक परिमाण में और अधिक निश्चिन्तता के साथ सदा इंगलिस्तान पहुंचते रहें और इसके साथ ही इंगलिस्तान के बने हुए माल के लिए भारत में अनन्त मांग बनी रहे ।''

## सौ साल का अनुभव

सन् 1757 से लेकर 1854 तक करीब 100 साल के अनुभव और सलाह मशवरे के बाद इंगलिस्तान के नीतिज्ञों को इस बात का विश्वास हुआ कि थोड़े से भारतवासियों को अंगरेजी शिक्षा देना इस देश में अंगरेजी साम्राज्य को कायम रखने के लिए आवश्यक है । किन्तु इस पर भी ये लोग इतने बड़े प्रयोग के लिए एकाएक साहस न कर सके। ट्रेवेलियन ने अपने लेख और बयान, दोनों, में उन्हें साफ आगाह कर दिया था कि अशिक्षित या अंगरेजी शिक्षा से वंचित भारतवासियों के दिलों में अपनी पराधीनता के विरुद्ध गहरा असन्तोष भीतर ही भीतर भड़कता रहता था, जिसका विदेशी शासकों को पता तक नहीं चल सकता था। यह स्थिति अंगरेजों के लिए बेहद खतरनाक थी। ट्रेवेलियन के बयान में दिल्ली और उत्तर भारत के अन्दर सन् 1857 से दस साल पहले से क्रान्ति की गुप्त तैयारियों और संभावनाओं की ओर साफ संकेत मिलता है । ट्रेवेलियन की आशंकाएं बहुत शीघ्र सच्ची साबित हुई । सन् 1857 की क्रान्ति ने एक बार इस देश के अन्दर ब्रिट्रिश साम्राज्य की जड़ों को बुरी तरह हिला दिया ।

## सरकारी विश्वविद्यालय

अंगरेज शासकों को अब ट्रेवेलियन, मैकाले जैसों की नीतिज्ञता और दूरदर्शिता में कोई संदेह न रहा । उनका बताया हुआ उपाय ही इस देश में अंगरेज राज को चिरस्थायी करने का एकमात्र उपाय था। लार्ड कैनिंग उस समय भारत का गवर्नर जनरल था। ठीक सन् 1857 में कलकत्ते, बम्बई और मद्रास के अन्दर सरकारी विश्वविद्यालय कायम करने के लिए एक कानून पास किया गया । सन् 1859 में इंगलिस्तान के प्रधानमंत्री ने सन् 1854 के खरीते को फिर से दोहरा कर पक्का किया ।

सन् 1854 का यह मशहूर खरीता ही भारत की आजकल (1929) की अंगरेजी शिक्षा प्रणाली और अंगरेज शासकों की शिक्षा नीति, दोनों का मूल स्रोत है । ब्रिटिश सरकार का शिक्षा विभाग इसी का नतीजा है ।

## शिक्षित भारतवासियों का चरित्र

दिल्ली कालेज के शुरू के विद्यार्थी, सर चार्ल्स ट्रेवेलियन के पटु शिष्य और पहले अफगान युद्ध में अंगरेजों के परम सहायक, पण्डित मोहनलाल से लेकर आज (1929) तक के अधिकांश अंगरेजी शिक्षा पाए हुए भारतवासियों के जीवन, उनके रहन-सहन और उनके चरित्र से जाहिर है कि लार्ड मैकाले और सर चार्ल्स ट्रेवेलियन जैसों की नीति कितनी दूरदर्शिता की थी । नतीजा यह है कि करीब डेढ़ सौ साल पहले तक जो देश संसार के शिक्षित देशों की अग्रतम श्रेणी में गिना जाता था, डेढ़ सौ साल के विदेशी शासन के बाद अब (1929) संसार के सभ्य कहलाने वाले देशों में, शिक्षा की दृष्टि से सबसे अधिक पिछड़ा हुआ है । जिस देश में प्राय: मनुष्य लिखना पढ़ना और हिसाब करना जानता था, वहां अब (1929) करीब 94% अशिक्षित हैं और थोड़े से अंगरेजी शिक्षा पाए हुए लोग अधिकतर अपने बाकी देशवासियों के सुख और दुख की ओर से उदासीन, सच्ची राष्ट्रीयता के भावों से कोसों दूर, विदेशी सत्ता के पृष्ठपोषक बने हुए हैं । ◆